परिवर्तन की कहानी

संजय चौबे की जुबानी

मेरा नाम संजय चौबे है और मैं नरसिंहपुर का रहने वाला हूँ। पहले मेरा स्वभाव उग्र हुआ करता था, जिसे मैं हमेशा बदलना चाहता था, पर बदल नहीं पा रहा था।मुझे बहुत जल्दी गुस्सा आ जाया करता था और मैं जिस व्यक्ति से भी गुस्सा होता था, उसके साथ नाराजगी या तो स्थायी बना लेता था या बहुत दिनों तक बनाये रखता था। यहाँ तक कि मैं अपनी 82 वर्षीय माँ पर भी गुस्सा होकर उनसे तेज आवाज में चिल्लाकर उनकी अच्छी बात को भी दबा देता था या मेरी गलत बात को भी उन पर थोप देता था। एक घटना मुझे याद आ रही है। कुछ समय पूर्व एक बार मैं रात लगभग 8 बजे घर पर भोजन करने बैठा ही था कि तभी माताजी ने बताया कि उनके एक पैर में सूजन और दर्द हो रहा है। मुझे आज भी याद और बेहद अफसोस है कि उस समय मैंने बेवजह ही माताजी से तेज आवाज में कहा कि यह दर्द और सूजन तुम शाम को नहीं बता सकतीं थीं? अब मैं खाना खाऊँ या दवा लेने जाऊँ। उस समय माताजी तो चुप हो गईं थीं, पर मैं बहुत अशांत सा हो गया था, इस घटना से। यद्यपि मैं बाद में दवा ले आया था, पर मेरे उन कड़वे बोलों का दर्द मुझे बार-बार कचोट रहा था। आनंदम अल्पविराम से जुड़ा तो सबसे पहले मैंने उस घटना के लगभग 1 वर्ष बाद माताजी के पैरों पर गिरकर रोते हुए माफी माँगी। मेरी नालायकी को तो माताजी उसी दिन भूल चुकी थीं, पर मेरा मन माफी मांगने के बाद ही शांत हो पाया।

चिन्ता करना मनुष्य की एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है। मैं भी इससे अछूता नहीं था। दिक्कत यह थी मेरे साथ कि हर किसी बात को लेकर बहुत ज्यादा चिंतित हो जाया करता था भले ही वह बात मेरे चिंता करने लायक होती भी या नहीं। जैसे कि– बच्चे यदि घर से बाहर बाजार भी जाते थे, तो रास्ते के ट्रैफिक को लेकर, वो ठीक से मार्केटिंग कर पायेंगे या नहीं, कहीं पैसे तो नहीं गिरा देंगे, माँ के घुटने का दर्द कब खत्म होगा, मैं जो ये कपड़े ले जा रहा हूँ, इसमें अच्छा लगूंगा या नहीं, बच्चों की पढाई, लोकल शहर में पोस्टिंग आदि और भी बहुत सी बेवजह की चिंताओं से मैं हमेशा घिरा रहता था। क्या परिवर्तन आया बताएं ...?

पहले मैं बहुत स्वार्थी किस्म का व्यक्ति था। सिर्फ मेरा हित हो, सिर्फ मेरे परिवार का हित हो, सिर्फ हम सुखी रहें, यह विचार मेरे साथ हमेशा रहता था। मैं घर पर बहुत-सी अतिरिक्त वस्तुओं का संग्रहण करके भी घर पर रखे रहता था, भले ही वह मेरे लिये उपयोगी हो या ना हो, वर्षों तक संभाले रहता था और अंतत: उसे फेंकना पड़ता या वह वस्तु खराब होकर खुद ही नष्ट हो जाती थी, पर मैं वह वस्तु किसी को देता नहीं था। अल्पविराम

के बाद मैने स्वयं का आंकलन किया तो खुद को बहुत तुच्छ, बहुत छोटा पाया और तभी संकल्प लिया कि अब से सभी जरूरतमंदों की हरसंभव मदद करने का प्रयास करुंगा। इसकी शुरूआत, मैंने प्रशिक्षण के पहले दिन से ही भोपाल के न्यूमार्केट में एक जरूरतमंद बच्चे को एक नई ऊनी स्वेटर दिलाकर की, जो कि दिसंबर माह की कड़कडाती ठंड में सिर्फ एक फटी-सी चीथड़ेनुमा कमीज को पहनकर घूम रहा था।

मैं घर और स्कूल के अधिकतर काम खुद ही करने पर यकीन करता था। इसका दुष्परिणाम यह होता था कि काम और काम की अधिकता के कारण प्राय: तनावग्रस्त, चिड़चिड़ा और गुस्सैल रहता था। अल्पविराम कार्यक्रम में भाग लेने के बाद मैंने अपने साथ अपनों पर भी विश्वास करना सीखा। इसकी एक शुरूआत भी मैंने भोपाल से ही शुरू की। स्कूल में बच्चों की छात्रवृति और अर्धवार्षिक परीक्षा का बहुत सा काम लंबित पड़ा था। मैंने भोपाल से मोबाइल पर ही अपने सहकर्मी स्टाफ टीचर्स से निवेदन किया कि छात्रवृत्ति और परीक्षा के रूके हुये काम को वे लोग मिलकर पूरा कर दें। इसके लिये उन्हें आवश्यक मार्गदर्शन और दिशा - निर्देश भी दिये। इसी प्रकार घर पर भी बेटे को भी कुछ ऐसे काम करने को कहा, जो उसने पहले कभी नहीं किये थे या मैंने उससे कभी करवाये ही नहीं थे। पहले तो इस पर किसी को विश्वास ही नहीं हुआ कि मैं इतने महत्वपूर्ण काम उनको सौंप रहा हूँ। फिर मेरे द्वारा उन पर विश्वास प्रकट करने पर उन्होंने काम की जवाबदारी स्वीकार कर ली।

प्रतिदिन अल्पविराम लेने से मेरी सोच, कार्य, कार्यशैली और विचारों में काफी परिवर्तन हुआ है। मैं खुद को और भी ज्यादा सकारात्मक होते हुए महसूस रहा हूँ।